लिखा जाएगा गणतंत्र का नया घोषणापत्र

जब लुटेरे और हत्यारे
लोग़ों में ख़ौफ़ पैदा नहीं करेंगे
जब धोखेबाज़ और मक्कार
नेताओं के भाषण
सुनने से कर देगी जनता इनकार
जब बूथ तक
एक भी वोटर नहीं जाएगा
जब समझ में आ जाएगा
धोखा है यह गणतंत्र
तो टिकट ख़रीद कर
इसका तमाशा देखने
कोई नहीं जाएगा
जिस मौके पर
देश की जनता को धकिया कर
दुनिया भर में लूट का डंका बजाने वाला
आता है बनकर मुख्य अतिथि
जब लुटेरे, हत्यारे और दंगाई
हाथ मिलाते हैं
गलबहियां देते हैं
लूट की नई योजनाओं के साथ
जनता के लिए झूठी घोषणाएं करते हैं
और भाड़े के भोंपू, अख़बार, टीवी
उनकी विरुदावली गाते हैं
जब जनता हक्की-बक्की
रोटी-पानी के लिए
हलकान होती है।
वो दिन आएगा
आएगा जल्दी
जब जनता कुटिलता भरी
'मन की बात साथ-साथ' पर
लगाएगी ज़ोरदार ठहाका
और भाड़े के गुंडों, बटमारों, रंगे सियार
संत-साध्वियों, बलात्कारियों और
थैलीशाहों के
हर प्यादे को सड़कों पे खदेड़ेगी
करेगी तुरंत हिसाब
झूठे गणतंत्र का बाज़ा बजाने वालो
जनता के धन की लूट पर
'बीस्ट' की सवारी गांठने वाले दैत्यों
हर जगह अपने लिए ख़तरा सूंघने वालों
पुलिस-फ़ौज-सिक्युरिटी
तुम्हारी हिफ़ाजत नहीं कर पाएगी
इस सदी में
पूरी दुनिया में
गणतंत्र का कोई नया घोषणापत्र
लिखा जाना तय है।

(मनोज कुमार झा की कविता)

दमनकारी काला कानून 'सशस्त्र बल विशेषाधिकार कानून' एक बार फ़िर चर्चा में

पिछले कई सालों से जिस ख़तरनाक निरंकुश दमनकारी कानून के ख़िलाफ़ देश के उत्तरपूर्व से लेकर कश्मीर तक में आम जनता बार-बार सड़कों पर उतरती रही है। यह क़ानून है 'सशस्त्र बल विशेषाधिकार क़ानून'। इसके चलते मिले संरक्षण की वजह से सेना की निरंकुशता बढ़ती चली गई है। अफस्पा जैसे काले क़ानून सेना की निरंकुशता व निर्ममता को बढ़ा देते है।

अफस्पा (सशस्त्र बल विशेषाधिकार क़ानून) इस हद तक ख़तरनाक है कि सेना द्वारा होने वाली गलतियों या इस क़ानून के अंतर्गत किए जाने वाले हत्याओं के लिए न्यायालय में इस पर मुकदमा भी दर्ज नहीं किया जा सकता। इसलिए इस क़ानून के अंतर्गत काम कर रही सेना भारत के न्यायालय से भी ऊपर है। इस एक्ट के तहत सेना को अप्रतिबन्धित व अनगिनत अधिकारों से सुसज्जित किया गया है ताकि वह आत्मनिर्णय के अधिकार के तहत न्यायपूर्ण लड़ाई लड़ रहे लोग़ों की आवाज़ को खामोश कर सके।

इस एक्ट के मुताबिक वारंट आफ़िसर या सेना के इसी रेंक के समकक्ष व्यक्ति को 'सार्वजनिक व्यवस्था' का तर्क देकर खुद के विवेक से किसी को गोली मारने यानी हत्या करने का अधिकार दिया गया है। शक के आधार पर ही बिना वारंट के तलाशी लेने व गोली मारने का अधिकार सेना को दिया गया है। इस क़ानून के चलते पूर्वोत्तर भारत व कश्मीर की जनता संगीनों के साये में रहने को विवश है। यहां के नागरिकों के बेहद सीमित अधिकारों को भी शासकों ने छीन लिया है। आतंकवाद के नाम पर घरों से किशोरों, युवकों को उठाया जाना व फ़िर उनको गायब कर देना आम बात है। इसी प्रकार तलाशी के नाम पर महिलाओं से बलात्कार कोई अपवाद नहीं बल्कि आम बात है। ये घृणित कृत्य यहां के आम नागरिकों में निश्चित तौर पर नफ़रत व आक्रोश ही पैदा कर सकते हैं।

सितम्बर 1958 में इस काले क़ानून को भारत सरकार ने पारित किया था। इसे तब असम-मणिपुर में लागू किया गया था। जिसे सन् 72 तक आते-आते पूरे ही पूर्वोत्तर क्षेत्र में (असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नगालैंड, त्रिपुरा और अरुणाचल प्रदेश) लागू कर दिया गया। इस क़ानून को फ़िर बाद के काल में पंजाब व कश्मीर में भी लागू कर दिया गया। इस क़ानून को लागू करने का एकमात्र मकसद था बर्बर दमन व हत्याओं का दौर चलाकर आज़ादी की आकांक्षा व संघर्ष का गला घोंट देना। यह क़ानून पंजाब को छोड़कर आज भी अन्य जगहों पर लागू है।

यही क़ानून है जिसे हटाये जाने की मांग को लेकर मणिपुर की ''इरोम शर्मिला चानू'' पिछले 14 सालों से भूख हड़ताल पर है इसी क़ानून के चलते मणिपुर में निर्दोष लोग़ों के कत्लेआम व महिलाओं के साथ सशस्त्र बलों द्वारा होनेवाले बलात्कार व हत्याओं की वजह से मणिपुर की जनता सड़कों पर उमड़ पड़ती थी। 2004 में 'मनोरमा बलात्कार हत्याकांड' ने भारतीय सेना के ख़िलाफ़ मणिपुर की महिलाओं के नफ़रत, आक्रोश व क्षुब्धता को वहां पहुंचा दिया था कि जहां यहां की महिलाओं ने भारतीय सेना के कार्यालय के सामने नग्न प्रदर्शन कर नारे लगाए थे 'इंडियन आर्मी-रेप अस'। इस प्रतिरोध ने भारतीय शासकों व सेना को अपनी बगलें झांकने को विवश कर दिया था।

सशस्त्र बल विशेषाधिकार क़ानून को हटाए जाने की मांग कश्मीर की जनता भी काफ़ी लंबे समय से कर रही है। मणिपुर व अन्य हिस्सों की तरह ही यहां भी सेना पर निर्दोषों की हत्याओं व बलात्कार के आरोप लगते रहे हैं। 23 फ़रवरी 1991 को कुपवाडा ज़िले के कुनुन पोसपोरा गांव की 53 महिलाओं के साथ सैनिकों द्वारा बलात्कार किया गया था जिसमें 13 साल से 80 साल तक की महिलायें भी थीं। लेकिन धूर्त शासक व इनका मीडिया यहां होने वाले हर विरोध प्रदर्शन को सांप्रदायिक व अंधराष्ट्रवादी रंग में रंग देने में मशगूल हो जाता है। भाजपा व संघी तो इसमें अव्वल हैं।

दिसंबर माह में होनेवाले विधान सभा चुनाव के मद्देनज़र सारी ही पूंजीवादी पार्टियां नेशनल कांफ्रेंस, पीडीपी, कांग्रेस व साम्प्रदायिक भाजपा आदि इस घटना को व अफस्पा के मामले पर अपना-अपना गेम प्लान कर रही हैं कि कैसे इसे इस्तेमाल करके अधिक सीटें हासिल की जा सकें। मुस्लिम कट्टरपंथी ताक़तें ऐसी घटनाओं का इस्तेमाल अलगाववाद को और मजबूत करने में करती हैं।

इस काले क़ानून को हटाये जाने का जहां तक सवाल है हुक्मरान इसे हटाने की इच्छा कतई नहीं रखते।

-नागरिक

भाषायी भेदभाव शासक वर्गीय राजनीति है

भारत के एक देश के रूप में गठन के बाद से ही भाषा का प्रश्न एक चिरस्थायी महत्व प्राप्त कर चुका है। संस्कृति, धर्म, भाषा, आदि के लिहाज से भारत बेहद विभिन्नता वाला देश है। भारत के लोक भाषा सर्वेक्षण द्वारा हाल में कराये गये सर्वेक्षण के अनुसार भारत में लगभग 780 भाषायें बोली जाती थीं, जिनमें से 250 पिछले 50 वर्षों से समाप्त हो गयीं। यदि अगले सौ वर्षों तक भी ऐसा ही रहा तो भारत अपना सम्पन्न भाषायी इतिहास खो देगा और बिना सांस्कृतिक जड़ों के कुछ भाषाओं की अर्द्धविकसित लिपियां ही रह जायेंगी।

ब्रिटिश उपनिवेशवादियों के भारत में उदय के साथ ही भाषा का सचेतन स्थानीय लोगों पर शासन करने या गुलाम बनाने के लिये इस्तेमाल किया। स्थानीय लोगों का शोषण करने के लिये यह जरूरी था कि देश की रीढ़ को न केवल सैनिक ढंग से बल्कि एक ऐसा शैक्षिक तंत्र खड़ा करके भी तोड़ा जाये, जो स्थानीय लोग़ों की तुच्छ और उपनिवेशवादियों की सांस्कृतिक श्रेष्ठता की तस्वीर प्रस्तुत करे। भारत के शिक्षा तंत्र के संदर्भ में मैकाले का वक्तव्य विचार करने योग्य है। वह कहता है, ''वर्तमान में हमें अपनी पूरी कोशिश करके एक वर्ग तैयार करना होगा जो हमारे और हमारे द्वारा शासित दसियों लाख लोगों के बीच दुभाषिये का काम करे। लोगों का एक ऐसा वर्ग जो खून व रंग में भारतीय हो लेकिन रूचियों, विचारों व मुल्यों व बौद्धिकता में अंग्रेज हो।'' इन्हीं परिस्थितियों में एक मध्यम वर्ग पैदा हो रहा था, जिसकी पहुंच फ्रांसीसी क्रांति (1789) के बाद पूरे विश्व को अपनी जद में ले लेने वाले स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व के विचारों तक हो चुकी थी, लेकिन साथ ही यह ऐसा वर्ग भी था, जो उपनिवेशवादियों के तलुए चाटने वाला भी था। न्युगी वा थियोंगो के शब्दों में, ''किसी शासन तंत्र के यह अंतिम विजय है कि शासित जनता उसका गुणगान करने लगे'' और यह ठीक वही था, जो अंग्रेजों ने भारत में हासिल किया। कांग्रेस पार्टी (भू-स्वामियों व निम्न पूंजीपति वर्ग की पार्टी) के अंतर्गत जिस समय भारत को आज़ादी दी गयी, उसी समय 'अंग्रेजी' भारत के शासक वर्ग की भाषा बन चुकी थी और यह जारी रहा, तब अंग्रेजी भारत में औपचारिक भाषा बना दी गयी। गोरे शासकों की जगह भूरे शासकों ने ले ली।

हाल में लोक सेवा परीक्षा की तैयारी करने वाले छात्रों को सीसैट (हिंदी भाषी क्षेत्र के छात्रों को होनेवाले नुकसान के कारण) पैटर्न में बदलाव लाने की मांग ने एक बार फ़िर शिक्षा और प्रशासनिक कामों में अंग्रेजी के इस्तेमाल पर सवाल खड़े कर दिये। आज़ादी के 67 साल बाद भी शासक वर्ग सभी को शिक्षित करने का प्रबंध नहीं कर पाया है। और केवल 20 प्रतिशत लोग ही अंग्रेजी बोल सकते हैं। पिछले 25 सालों में खुले सभी निजी स्कूल व कॉलेज शैशिक माध्यम के रूप में अंग्रेजी भाषा का प्रयोग करते हैं। इस प्रकार के वातावरण में सीखना महज एक मानसिक कार्यवाही बन चुकी है, न कि भावनात्मक तौर पर हासिल अनुभव क्योंकि जब कोई बच्चा किसी ऐसी भाषा में सीखता है, जिसे वह अपने दैनदिन जीवन में प्रयोग न करता हो, तो वह विकास की अपनी क्षमता खो देता है, साथ ही ऐसी भाषा विचारों के मामले में उसे पंगु बना देती है। पूंजीपति वर्ग अथवा शासक वर्ग ने ऐसे मापदंड बना दिये हैं। जहां अंग्रेजी भाषा के ज्ञान को साक्षरता का पर्याय स्थापित कर दिया है और अपनी भाषा में बात करने को नीची नज़र से देखा जाता है। भारत के पूंजीपति वर्ग ने मैकाले की परंपरा को स्थायी बना दिया है। इस प्रकार ऐसा वातावरण निर्मित हो गया है, जहां अपनी भाषा को लेकर स्थानीय लोग़ों के अंदर हीन भावना घर कर गयी है।

शिक्षा हर बच्चे का मूलभूत अधिकार है। उसके पास अपनी भाषा में शिक्षित होने का विकल्प होना चाहिए। लेकिन पूंजीवादी समाज में यह खासा मुश्किल है क्योंकि इसमें शासक वर्ग बाकी आबादी पर हमेशा अपनी ही भाषा थोपने का उद्देश्य रखता है और इस तरीके से लोग़ों को अपनी गुलामी में बनाये रखता है। भाषा किसी व्यक्ति की कार्यकुशलता की योग्यता या क्षमता को निर्धारित नहीं करती। इसीलिए भाषा के आधार पर लोग़ों के बीच भेदभाव करना, अपने ही उद्देश्यों की पूर्ति के लिए शासक वर्ग की राजनीति है। प्रत्येक भाषा को फलने-फूलने के लिए पर्याप्त स्थान मुहैय्या होना चाहिए और यह वर्गविहीन समाज में ही संभव है।

-शिप्रा

मज़दूर मोर्चा

नियमित रूप से हर माह की पहली व सोलह तारीख़ को प्राप्त करने के लिए अपने हॉकर से संपर्क करें। कोई दिक्कत होने पर फ़रीदाबाद के पाठक शर्मा न्यूज एजेंसी से फोन नं 9811159238 पर तथा बल्लभगढ़ के पाठक अरोड़ा न्यूज़ एजेन्सी फोन नं 9811477204, करनाल के पाठक अशोक कुमार जैन, फुटवियर जवाहर मार्किट सदर बाजार से फोन नं 9896436739 पर सम्पर्क करें।

फरीदाबाद में अन्य बिक्री केन्द्र :

1. आनंद मैगजीनल सैंटर केसी रोड, एनएच-5,
2. प्रिंट फोर्ट टेलीफोन एक्सचेंज के सामने नेहरू ग्राउंड,
3. रेलवे बुक स्टाल ओल्ड रेलवे स्टेशन,
4. रैंक, 45 नीलम चौक,
5. एनआईटी रेलवे स्टेशन के बाहर बाटा चौक पुल के नीचे,
6. राम खिलावन बल्लभगढ़ बस अड्डा पुलिस चौकी के सामने,
7. हितेश ग्रोवर सैक्टर 29 पेट्रोल पम्प के पास ।
8. जितेन्द्र, बाटा सैंटर - 9971064207